[2015] 1 उम. नि. प. 179

राजस्थान राज्य

बनाम

मोहम्मद मुस्लिम तगला

13 अक्तूबर, 2014

न्यायमूर्ति रंजना प्रकाश देसाई और न्यायमूर्ति एन. वी. रमन

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 363, 366क और 376 [सपठित दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 433] – अपहरण और बलात्संग – दोषसिद्धि किए जाने पर दंडादेश लघूकरण – उच्च न्यायालय और समुचित सरकार की शक्ति – न्यायालय समुचित सरकार को दंडादेश का लघूकरण करने का नहीं अपितु लघूकरण किए जाने के मामले पर विचार करने का निदेश दे सकता है, अतः उच्च न्यायालय द्वारा सरकार के दंड का लघूकरण करने का निदेश दिया जाना विधिविरुद्ध होगा ।

इस मामले में अभियुक्त मोहम्मद मुस्लिम तगला का विचारण अन्य दो अभियुक्तों अर्थात् सबीना और मोहम्मद दाऊद के साथ किया गया । विचारण न्यायालय ने सबीना और मोहम्मद दाऊद को सभी आरोपों से दोषमुक्त कर दिया और अभियुक्त मोहम्मद मुस्लिम तगला को धारा 363 और 376 आदि के अधीन दोषसिद्ध कर दिया । अभियुक्त मोहम्मद मुस्लिम तगला ने राजस्थान उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की । उच्च न्यायालय में अभियुक्त के काउंसेल ने लघूकरण किए जाने की दलील दी । इस पर लोक अभियोजक ने कोई आपत्ति नहीं की । उच्च न्यायालय लघूकरण का आदेश पारित कर दिया । राजस्थान राज्य ने इस आदेश से व्यथित होकर उच्चतम न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की । अपील के लंबित रहने के दौरान ही अभियुक्त सात वर्ष का कारावास भोग चुका था, इसलिए लघूकरण का कोई औचित्य नहीं रह पाया, किन्तु उच्चतम न्यायालय ने उच्च न्यायालय के निर्णय पर खेद व्यक्त करते हुए अपील का निपटारा किया । अपील निपटाते हुए,

अभिनिर्धारित – जब समुचित सरकार दंडादेश का लघूकरण करती है, तब वह अपनी प्रभुत्व शक्तियों का प्रयोग करती है । न्यायालय समुचित सरकार

को उसकी प्रभुत्व शक्तियों का प्रयोग किए जाने का निदेश नहीं दे सकता । न्यायालय समुचित सरकार को इससे अधिक कोई निदेश नहीं दे सकता है कि वह मामले पर दंडादेश का लघूकरण किए जाने के लिए मामले पर विचार करे । यह विधिक स्थिति अब अनिर्णीत विषय नहीं है । इस चर्चा का मुख्य सार यह है कि उच्च न्यायालय ने राज्य सरकार को प्रत्यर्थी के पक्ष में दंडादेश लघूकरण करने का निदेश देने में त्रुटि की है । न्यायालय केवल राज्य सरकार को यह निदेश दे सकता था कि वह प्रत्यर्थी के मामले पर दंडादेश का लघूकरण किए जाने के संबंध में विचार करे । किसी भी स्थिति में, यदि यह मान लिया जाए कि उच्च न्यायालय ऐसा निदेश दे सकता था, चूंकि वह दंड संहिता की धारा 376 के अधीन की गई दोषसिद्धि के मामले पर विचार कर रहा था, तब उसे ऐसा करने के लिए उन असाधारण परिस्थितियों यदि कोई थीं, का उल्लेख करना चाहिए था जिनके आधार पर उसे ऐसा निदेश देना पड़ा । दुर्भाग्यवश, उच्च न्यायालय ने केवल प्रत्यर्थियों के काउंसेल द्वारा किए गए निवेदन और राज्य के काउंसेल द्वारा की गई रियायत पर विचार किया है । यदि उच्च न्यायालय ने यह महसूस किया है कि अभियोजन पक्षकथन अत्यंत दुर्बल है और प्रत्यर्थी दोषमुक्त किए जाने योग्य है, तब ऐसी स्थिति में उच्च न्यायालय को साक्ष्य पर विचार करके ही प्रत्यर्थी को दोषमुक्त करना चाहिए था । किंतु, उच्च न्यायालय ने ऐसा तरीका नहीं अपनाया । निर्णय का निपटारा करने के पूर्व, न्यायालय उच्च न्यायालय में लोक अभियोजक द्वारा बरती गई रियायत पर खेद है । प्रथमतः अपराध गंभीर है और ऐसे गंभीर अपराध किए जाने की स्थिति में, लोक अभियोजक को ऐसी रियायत नहीं बरतनी चाहिए थी कि न्यायालय को सरकार को दंडादेश का लघूकरण करने का निदेश देना पड़े । इसके अतिरिक्त, लोक अभियोजक ने विधिक स्थिति पर विचार किए बिना रियायत बरती है । किसी दांडिक मामले में लोक अभियोजक की महत्वपूर्ण भूमिका होती है । यह अत्यंत खेदपूर्ण है कि ऐसे गंभीर मामले में लोक अभियोजक ने इस प्रकार का औपचारिक दृष्टिकोण अपनाया है । चूंकि यह अपील निष्फल हो गई है, इसलिए न्यायालय ने इस मामले पर और अधिक विचार नहीं किया । न्यायालय को केवल यह आशा है कि न्यायालय द्वारा व्यक्त किए गए मतों पर सभी संबंधित प्राधिकारी विचार करेंगे । (पैरा 9, 12 और 13)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2003] (2003) 7 एस. सी. सी. 121 : **राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली सरकार)** बनाम **प्रेम राज ;** 11

[2002] (2002) 7 एस. सी. सी. 222 : **दिल्ली प्रशासन (राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली)** बनाम **मनोहर लाल ;** 10

[1996] (1996) 5 एस. सी. सी. 495 : **पंजाब राज्य** बनाम **केसर सिंह** । 10

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2014 की दांडिक अपील सं. 2184.

2008 की दांडिक अपील सं. 639 में राजस्थान उच्च न्यायालय, जयपुर की एकल न्यायपीठ के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री मिलिन्द कुमार

प्रत्यर्थी की ओर से श्री जॉन मैथ्यू

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति रंजना प्रकाश देसाई ने दिया ।

न्या. देसाई – इजाजत प्रदान की जाती है ।

2. 2007 के सेशन मामला सं. 24 में प्रत्यर्थी का विचारण अन्य दो अभियुक्तों अर्थात् सबीना और मोहम्मद दाऊद के साथ भारतीय दंड संहिता, 1860 (जिसे संक्षेप में 'दंड संहिता' कहा गया है) की धारा 109 के साथ पठित धारा 363, 366, 376, 307 के अधीन अपर जिला और सेशन न्यायाधीश (त्वरित न्यायालय), सीकर, राजस्थान द्वारा किया गया । विद्वान् सेशन न्यायाधीश, सीकर ने तारीख 11 जून, 2008 के निर्णय और आदेश के अनुसार सबीना और मोहम्मद दाऊद को सभी आरोपों से दोषमुक्त कर दिया । प्रत्यर्थी मोहम्मद मुस्लिम तगला को दंड संहिता की धारा 363 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया और तीन वर्ष का कठोर कारावास भोगने तथा 1000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने

जिसका व्यतिक्रम किए जाने पर छह मास का साधारण कारावास भोगने का दंडादेश दिया । प्रत्यर्थी को दंड संहिता की धारा 366क के अधीन भी दोषसिद्ध किया गया और पांच वर्ष का कठोर कारावास भोगने तथा 2000/- रुपए जुर्माने का संदाय करने जिसका व्यतिक्रम किए जाने पर छह मास का साधारण कारावास भोगने का दंडादेश दिया गया । उसे दंड संहिता की धारा 376 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए भी दोषसिद्ध किया गया और सात वर्ष का कठोर कारावास भोगने तथा 5000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने जिसका व्यतिक्रम किए जाने पर छह मास का साधारण कारावास भोगने का दंडादेश दिया गया । सारभूत दंडादेशों के साथ-साथ चलाए जाने का आदेश दिया गया ।

3. उक्त निर्णय और आदेश से व्यथित होकर प्रत्यर्थी ने राजस्थान उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की । आक्षेपित निर्णय से यह पता चलता है कि प्रत्यर्थी के काउंसेल ने उच्च न्यायालय में गुणता के आधार पर मामले में दलील नहीं दी । काउंसेल ने केवल न्यायालय से यह निवेदन किया कि संबद्ध प्राधिकारियों को यह निदेश दिया जाए कि वे प्रत्यर्थी को दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (जिसे संक्षेप में 'संहिता' कहा गया है) की धारा 433 का लाभ दें । राजस्थान राज्य की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् लोक अभियोजक ने उक्त प्रार्थना का विरोध नहीं किया और उच्च न्यायालय ने इस तथ्य को आक्षेपित आदेश में अभिलिखित किया । इसके पश्चात् उच्च न्यायालय ने संबद्ध प्राधिकारियों को यह निदेश दिया कि वे अपीलार्थी को संहिता की धारा 433 का लाभ देते हुए अपील का निपटारा करें । इस आदेश का सुसंगत भाग निम्न प्रकार है :–

> "पक्षकारों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेलों को सुनने और आक्षेपित निर्णय के साथ अभिलेख पर उपलब्ध सुसंगत सामग्री का सावधानीपूर्वक परिशीलन करने के पश्चात् संबद्ध प्राधिकारियों को यह निदेश दिया जाता है कि वे अभियुक्त अपीलार्थी को विधि के अनुसरण में संहिता की धारा 433 का लाभ दें ।"

4. इस आदेश से व्यथित होकर, राजस्थान राज्य ने वर्तमान अपील फाइल की है ।

5. तारीख 8 मई, 2014 को इस न्यायालय ने राजस्थान राज्य के

विद्वान् काउंसेल से यह मालूम किया कि क्या लोक अभियोजक ने प्रत्यर्थी के काउंसेल द्वारा किए गए इस निवेदन का वास्तव में विरोध नहीं किया था कि संबद्ध प्राधिकारियों को यह निदेश दिया जाए कि वे प्रत्यर्थी को संहिता की धारा 433 का लाभ दें । काउंसेल ने यह दलील दी कि लोक अभियोजक ने उच्च न्यायालय में ऐसा कथन नहीं किया था । अतः हमने यह निदेश दिया कि इस संबंध में शपथ-पत्र फाइल किया जाए । तथापि, संबद्ध लोक अभियोजक ने कोई भी शपथ-पत्र फाइल नहीं किया है ।

6. जैसा कि इस न्यायालय द्वारा निदेश दिया गया है, प्रत्यर्थी को सहायक उप निरीक्षक प्रेम सिंह, पुलिस थाना कोतवाली, सीकर, राजस्थान के माध्यम से नोटिस तामील कराया गया है । सहायक उप निरीक्षक प्रेम सिंह ने इस संबंध में शपथ-पत्र फाइल किया है । नोटिस तामील कराए जाने का सबूत उक्त शपथ-पत्र के साथ संलग्न किया गया है । नोटिस तामील कराए जाने के बावजूद, प्रत्यर्थी न तो स्वयं और न ही प्लीडर के माध्यम से न्यायालय में उपस्थित हुआ । इसलिए, तारीख 17 सितंबर, 2014 को इस न्यायालय ने अपने रजिस्ट्री विभाग को निदेश दिया कि प्रत्यर्थी के लिए कोई अधिवक्ता नियुक्त किया जाए । तद्नुसार, श्री जॉन मैथ्यू, अधिवक्ता को इस न्यायालय की रजिस्ट्री द्वारा नियुक्त किया गया है और उन्होंने आज हमारी ठीक प्रकार सहायता की है ।

7. अपीलार्थी राज्य ने इस आधार पर आक्षेपित आदेश को चुनौती दी है कि प्रत्यर्थी द्वारा कारित किया गया अपराध गंभीर है, अतः उच्च न्यायालय ने प्रत्यर्थी को संहिता की धारा 433 का लाभ दिए जाने के संबंध में प्राधिकारियों को निदेश देकर गलत किया है । तथापि, अपील ज्ञापन में यह कथन नहीं किया गया है कि लोक अभियोजक ने उच्च न्यायालय में अपीलार्थी के काउंसेल की दलील के साथ सहमति व्यक्त नहीं की थी । यह कथन केवल इस न्यायालय में किया गया है । यह भी विचार किया जाना चाहिए कि प्रारंभ में प्रत्यर्थी सात वर्ष का कारावास भोग चुका है और उसे अभिरक्षा से मुक्त किया गया है । यह कथन अपीलार्थी राज्य के काउंसेल द्वारा किया गया है और उन्होंने अपनी दलील के समर्थन में इस न्यायालय के समक्ष वह पत्र प्रस्तुत किया है जो पुलिस अधीक्षक, बीकानेर केंद्रीय कारागार द्वारा अपर पुलिस अधीक्षक, सीकर, राजस्थान को लिखा गया था । काउंसेल ने यह दलील दी है कि यद्यपि उच्च न्यायालय ने

संबद्ध प्राधिकारियों को यह निदेश दिया था कि वे प्रत्यर्थी को संहिता की धारा 433 के अधीन दंडादेश का लघूकरण किए जाने का लाभ देंगे, फिर भी उक्त लाभ नहीं दिया गया । चूंकि प्रत्यर्थी को उस पर अधिरोपित दंडादेश भोगे जाने के पश्चात् जेल से छोड़ा गया है और उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निदेश के अनुसरण में संहिता की धारा 433 के अधीन प्रत्यर्थी को लाभ दिए जाने का संबद्ध प्राधिकारियों द्वारा कोई भी कदम नहीं उठाया गया है, इसलिए वर्तमान अपील वास्तव में निष्फल हो जाती है । तथापि, इस अपील को निष्फल घोषित करने के पूर्व, कतिपय संप्रेक्षण किए जाने आवश्यक हैं ।

8. संहिता की धारा 433 दंडादिष्ट व्यक्ति की सम्मति के बिना दंडादेश का लघूकरण करने की समुचित सरकार की शक्ति से संबंधित है । यह धारा इस प्रकार है :–

> "**433. दंडादेश के लघूकरण की शक्ति** – समुचित सरकार दंडादिष्ट व्यक्ति की सम्मति के बिना –
>
> (क) मृत्यु दंडादेश का भारतीय दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) द्वारा उपबन्धित किसी अन्य दंड के रूप में लघूकरण कर सकती है ;
>
> (ख) आजीवन कारावास के दंडादेश का, चौदह वर्ष से अनधिक अवधि के कारावास में या जुर्माने के रूप में लघूकरण कर सकती है ;
>
> (ग) कठिन कारावास के दंडादेश का किसी ऐसी अवधि के सादा कारावास में जिसके लिए वह व्यक्ति दंडादिष्ट किया जा सकता है, या जुर्माने के रूप में लघूकरण कर सकती है ;
>
> (घ) सादा कारावास के दंडादेश का जुर्माने के रूप में लघूकरण कर सकती है ।"

9. जब समुचित सरकार दंडादेश का लघूकरण करती है, तब वह अपनी प्रभुत्व शक्तियों का प्रयोग करती है । न्यायालय समुचित सरकार को उसकी प्रभुत्व शक्तियों का प्रयोग किए जाने का निदेश नहीं दे सकता । न्यायालय समुचित सरकार को इससे अधिक कोई निदेश नहीं दे सकता है कि वह मामले पर दंडादेश का लघूकरण किए जाने के लिए मामले पर विचार करे । यह विधिक स्थिति अब अनिर्णीत विषय नहीं है ।

10. **दिल्ली प्रशासन (राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली)** बनाम

मनोहर लाल[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह कथन किया है कि संहिता की धारा 433 के अधीन शक्ति का प्रयोग एक कार्यकारी विवेकाधिकार है । **पंजाब राज्य** बनाम **केसर सिंह**[2] वाले मामले में इस न्यायालय ने इस स्थिति को निम्न प्रकार स्पष्ट किया है :–

> "दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 433 के अधीन किसी समुचित मामले में सरकार को किसी दोषसिद्ध व्यक्ति के दंडादेश का लघूकरण करने और न्यायालयों द्वारा अधिरोपित दंडादेश की अवधि की समाप्ति के पूर्व छोड़ने का आदेश करने के लिए समर्थ बनाया गया है । ..... उसके अतिरिक्त यदि उच्च न्यायालय ऐसा कोई निदेश देता है तो वह निदेश केवल समयपूर्व छोड़े जाने के मामले पर सरकार द्वारा विचार किए जाने के लिए होता है न कि प्रत्यर्थी को समयपूर्व छोड़ने के लिए । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 433 के अधीन शक्ति का प्रयोग करने का अधिकार सरकार को है और इस अधिकार का प्रयोग नियमों और सुस्थापित सिद्धांतों के अनुसरण में किया जाना चाहिए । अतः, उच्च न्यायालय का आक्षेपित आदेश कायम नहीं रखा जा सकता है और एतद्द्वारा अपास्त किया जाता है ।"

11. **राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली सरकार)** बनाम **प्रेम राज**[3] वाले मामले में इस न्यायालय ने विधि आयोग की 41वीं रिपोर्ट के सुसंगत भाग को निर्दिष्ट किया है और यह मत व्यक्त किया है कि लघूकरण करने की शक्ति एकमात्र रूप से समुचित सरकार में निहित है । साथ ही इन शक्तियों का प्रयोग समुचित सरकार द्वारा विधि के प्रयोजनार्थ युक्तियुक्त रूप से आनुषंगिक और सुसंगत कारणों, उपशमनकारी परिस्थितियों और/या लघूकरण के लिए आवश्यक अनुकंपाशील तथ्यों और समाज तथा लोक हित संबंधी संघटकों को ध्यान में रखते हुए किया जाना चाहिए ।

12. इस चर्चा का मुख्य सार यह है कि उच्च न्यायालय ने राज्य सरकार को प्रत्यर्थी के पक्ष में दंडादेश का लघूकरण करने का निदेश देने में त्रुटि की है । न्यायालय केवल राज्य सरकार को यह निदेश दे सकता था

---

[1] (2002) 7 एस. सी. सी. 222.
[2] (1996) 5 एस. सी. सी. 495.
[3] (2003) 7 एस. सी. सी. 121.

कि वह प्रत्यर्थी के मामले पर दंडादेश का लघूकरण किए जाने के संबंध में विचार करे । किसी भी स्थिति में, यदि यह मान लिया जाए कि उच्च न्यायालय ऐसा निदेश दे सकता था, चूंकि वह दंड संहिता की धारा 376 के अधीन की गई दोषसिद्धि के मामले पर विचार कर रहा था, तब उसे ऐसा करने के लिए उन असाधारण परिस्थितियों का उल्लेख करना चाहिए था जिनके आधार पर ऐसा निदेश देना पड़ा । दुर्भाग्यवश, उच्च न्यायालय ने केवल प्रत्यर्थियों के काउंसेल द्वारा किए गए निवेदन और राज्य के काउंसेल द्वारा की गई रियायत पर विचार किया है । यदि उच्च न्यायालय ने यह महसूस किया है कि अभियोजन पक्षकथन अत्यंत दुर्बल है और प्रत्यर्थी दोषमुक्त किए जाने योग्य है, तब ऐसी स्थिति में उच्च न्यायालय को साक्ष्य पर विचार करके ही प्रत्यर्थी को दोषमुक्त करना चाहिए था । किंतु, उच्च न्यायालय ने ऐसा तरीका नहीं अपनाया ।

13. निर्णय का निपटारा करने के पूर्व, हमें उच्च न्यायालय में लोक अभियोजक द्वारा बरती गई रियायत पर खेद है । प्रथमतः अपराध गंभीर है और ऐसे गंभीर अपराध किए जाने की स्थिति में, लोक अभियोजक को ऐसी रियायत नहीं बरतनी चाहिए थी कि न्यायालय को सरकार को दंडादेश का लघूकरण करने का निदेश देना पड़े । इसके अतिरिक्त, लोक अभियोजक ने विधिक स्थिति पर विचार किए बिना रियायत बरती है । किसी दांडिक मामले में लोक अभियोजक की महत्वपूर्ण भूमिका होती है । यह अत्यंत खेदपूर्ण है कि ऐसे गंभीर मामले में लोक अभियोजक ने इस प्रकार का औपचारिक दृष्टिकोण अपनाया है । चूंकि यह अपील निष्फल हो गई है, इसलिए हम इस मामले पर और अधिक विचार नहीं करेंगे । हमें केवल यह आशा है कि हमारे द्वारा व्यक्त किए गए मतों पर सभी संबंधित प्राधिकारी विचार करेंगे । अपील निष्फल होने के कारण निपटाई जाती है ।

अपील का निपटारा किया गया ।

अस.